परीक्षक से कैसे पायें अधिक से अधिक नम्बर ?

लिखित यानी कि सिविल सेवा की मुख्य परीक्षा में आपको कितने नम्बर मिलते हैं, आपकी अपनी तैयारी के साथ-साथ इस बात पर भी निर्भर करता है कि आप परीक्षक के अंदर घुसने में यानी कि उसे प्रभावित करने में कितने सफल रहे हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि परीक्षक को प्रभावित करना ही सब कुछ है। बल्कि मात्र इतना है कि इसका भी असर पड़ता है, और इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। इस बारे में कम से कम मेरा तो अनुभव यही रहा है -एक स्टूडेन्ट के रूप में भी तथा एक परीक्षक के रूप में भी।

बारहवीं से लेकर बी.ए. तक के चार सालों की मेरी मार्कशीट के आंकड़े मेरी क्षमता के बारे में एक अजीब सी कहानी कहते हैं। वह यह कि मैं हमेशा ही 58 और 59 प्रतिशत के बीच झूलता रहा हूँ। साठ को छूने की बहुत-बहुत कोशिश की, लेकिन वह हो न सका। जबकि तैयारी में मैंने कभी कोई कसर नहीं छोड़ी। तैयारी के घंटे बढ़ाये, किन्तु ये बढ़ाये गये घण्टे मेरे स्कोर को बढ़ाने में असफल रहे।

किन्तु एम.ए. में अचानक इसमें काफी इज़ाफा हो गया। क्यों? क्या मैंने घण्टे और बढ़ा दिये? दरअसल, उसकी तो कोई गुंजाइश ही नहीं रह गई थी। तो फिर क्या हुआ? हुआ यह कि एम.ए. (पूर्वार्द्ध) में मैं पहली बार कॉलेज के किसी प्रोफेसर के निजी सम्पर्क में आया। मैंने उन्हें समझने की कोशिश की और बस इसी समझ ने सब कुछ बदल दिया। बाद में जब मैं स्वयं परीक्षक की भूमिका में आया, तो मैंने अपनी उस समझ की पीठ थपथपाई, क्योंकि अब मैं वही-वही सब कुछ कर रहा था, जो मैंने उस समय समझा था। यह लेख अपनी उन्हीं समझ को आप सब तक पहुँचाकर आप सबको परीक्षा संबंधी एक अत्यंत महत्वपूर्ण सत्य से परिचित कराने का एक प्रयास है। तो आइये, शुरू करते हैं।

शुरूआत करते हैं विज्ञान के एक बहुत ही व्यावहारिक सिद्धांत से। इसे आप "संतृप्ति का सिद्धांत" कह सकते हैं। प्रत्येक वस्तु की तरह प्रत्येक व्यक्ति की भी संतृप्ति की एक अवस्था होती है। संतृप्ति-अवस्था (saturation point) का अर्थ है-चरम विन्दु। यानी कि अब उससे अधिक संभव नहीं है। जैसे शुष्क वायु एक निश्चित सीमा तक ही आर्द्रता ग्रहण कर सकती है, उसी प्रकार हम भी मेहनत करके एक सीमा तक ही ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यदि हम इसके आगे भी मेहनत पर मेहनत किये जा रहे हैं, बशर्ते कि हमारी यह मेहनत संतृप्त विन्दु तक पहुँच चुकी हो, तो उससे मेहनत के अनुपात में बहुत ही थोड़ा सा फायदा होगा, या होगा ही नहीं। लेकिन आप इसे छोड़ नहीं सकते, क्योंकि आप जिसके लिए मेहनत कर रहे हैं, उसे आपको हर हाल में हासिल करना ही है। तो फिर आप करेंगे क्या?

यहाँ समझने की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पढ़ने का एक ही पक्ष होता है-पढ़ना। सोचना और उसे याद करना इसी के भाग हैं। लेकिन परीक्षा के दो पक्ष होते हैं-पढ़ना और फिर पढ़े हुए को प्रस्तुत करना। निश्चित तौर पर इनमें पढ़ने का पलड़ा प्रस्तुति के पलड़े से भारी होता है। और काफी भारी होता है। लेकिन प्रस्तुति का पलड़ा इतना हल्का भी नहीं होता कि उसकी अनदेखी की जा सके। हाँ, यदि आप परीक्षा में सामान्य और सामान्य से कुछ बेहतर परिणाम चाहते हैं, तब तो पढ़ने को ही सब कुछ मानकर चल सकते हैं, और आप सफल भी हो जायेंगे। लेकिन यदि आप बेहतरीन यानी कि दूसरों से काफी अच्छे (सर्वोच्च के आसपास) परिणाम चाहते हैं, तो सिर्फ पढ़ना, अधिक से अधिक पढ़ना आपकी इच्छा को पूरा कर पाने में सफल नहीं हो सकता।

दरअसल दोस्तो, यहीं पर पढ़े हुए को प्रस्तुत करने की बात आती है। प्रस्तुति का यह तरीका ही वह आधार है, जो आपके अध्ययन के संतृप्त-विन्दु को स्पर्श किये बिना ही उसकी प्रभावक क्षमता को बढ़ा देगा। इस सत्य के बारे में मैं सिविल सर्विस परीक्षा की टॉपर इरा सिंघल की उस आत्मस्वीकृति की याद दिलाना चाहूंगा, जिसमें उन्होंने अपने टॉप करने के रहस्य का खुलासा किया था। वे इससे पहले भारतीय राजस्व सेवा में आ चुकीं थीं और यह उनका चौथा प्रयास था। उनके कहने का आशय यह था कि उन्होंने इसके लिए कुछ भी अलग से नहीं पढ़ा। जो किया, वह केवल यह कि अब तक जो भी पढ़ा है, उसे प्रस्तुत कैसे किया जाये। और उसी से सब कुछ बदल गया। यहाँ मैं आपसे 'प्रस्तुति' के लिए एक अलग ऐसे शब्द का उपयोग करने की

इज़ाजत चाहता हूँ, जो मूलतः व्यापार-जगत का शब्द है। मुझे लगता है कि आप इस शब्द के माध्यम से शायद मेरे भावार्थ को अच्छी तरह पकड़ सकेंगे। यह शब्द है-"पैकेजिंग"।

प्रोडक्ट अच्छा है, अच्छी बात है। इसे (वस्तु) तो अच्छा होना ही चाहिए। यह चलेगा। लेकिन यदि आपको इसी प्रोडक्ट की इससे अधिक कीमत (अधिकतम लाभ) चाहिए, तो फिर वह अधिक कीमत इस काम से मिलेगी कि उसकी पैकेजिंग भी अच्छी हो। यहाँ हमें यह बात कतई नहीं भूलनी है कि यह पैकेजिंग वस्तु की गुणवत्ता के बदले नहीं, बल्कि उसकी गुणवत्ता को बनाये रखते हुए करनी है।

वस्तुतः यहाँ 'पैकेजिंग' का अर्थ है क्या? इसे आप एक प्रकार का सौंदर्य-विधान कह सकते हैं। सुंदर वस्तु के प्रति व्यक्ति का आकर्षण स्वाभाविक है। यह आकर्षण हमारे अंदर उस वस्तु के प्रति एक उत्सुकता पैदा करता है। फलस्वरूप हम उसकी अनदेखी नहीं कर पाते। पैकेट को खोलने के बाद भले ही हमारे हाथ कचरा ही आये, लेकिन पैकेजिंग की खूबसूरती हमें उसे एक बार खोलकर देखने को तो मजबूर कर ही देती है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है। इसी से जुड़ा एक मनोविज्ञान यह भी है कि हम सोचते हैं कि यदि पैकेजिंग इतनी अच्छी है, तो उसके अंदर बंद वस्तु भी अच्छी ही होगी। इसे आप "प्रथम दृष्ट्या प्रभाव" कह सकते हैं। यानी कि मन में इसके प्रति एक सकारात्मक धारणा बन जाती है। क्या आपके साथ ऐसा ही नहीं होता है?

यहाँ आप पैकेजिंग को "अपने द्वारा लिखा गया उत्तर" समझें तथा आपकी इस पैकेजिंग को खोलकर देखने वाले व्यक्ति को परीक्षक समझें। इससे आप मेरे मन्तव्य को अच्छी तरह से पकड़ पायेंगे। यहाँ यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो चुकी है कि परीक्षा के इस दंगल में दो लोग होते हैं-एक आप और दूसरा परीक्षक। बात यदि दंगल की हो, तो आप अपनी तैयारी को केवल अपने तक सीमित नहीं रख सकते। आपको अपने सामने वाले को समझकर उसके अनुसार भी अपनी तैयारी को शक्ल देनी पड़ती है। अखबारों में कभी-कभार इस खबर से आपका सामना हुआ होगा कि किस प्रकार कोई भी टीम अपनी प्रतिद्वन्दी टीम के अनुसार अपनी रणनीति तैयार करती है। इस बारे में आप यहाँ आमिर खान की फिल्म 'दंगल' के अंत के पहले के उस दृश्य को याद करें कि किस प्रकार एक विश्व-प्रतियोगिता में पिता अपनी बेटी को दो अलग-अलग कुश्तीबाजों के विरूद्ध दो अलग-अलग नीतियां अपनाने का निर्देश देता है, और ये दोनों नीतियां आपस में एक-दूसरे की विरोधी होती हैं। आपके पक्ष में यहाँ सबसे अच्छी बात यह है कि दूसरे पक्ष में जो व्यक्ति है, जिसे हम आगे चलकर परीक्षक कहेंगे, उनमें उतनी वैविध्यता नहीं होती, जितनी यह अन्य क्षेत्रों में होती है। प्रतियोगिता होने के बावजूद परीक्षक का चरित्र अन्य क्षेत्र के लोगों की तुलना में अधिक सम, अधिक स्थिर, इसलिए सर्वाधिक विश्वसनीय होता है। इसलिये परीक्षक के बारे में सोच-सोचकर आपको बेवजह अधिक परेशान होने की बिल्कुल भी जरूरत नहीं है।

लेकिन हाँ, इतना जरूर है कि उसके बारे में कुछ महत्वपूर्ण बातों को जान लेने से आप लाभ की स्थिति में आ जायेंगे। ऐसा इसलिए, क्योंकि तब आप उसके साथ अपनी वेवलेन्थ का तालमेल बेहतर तरीके से बैठा सकेंगे। और यह तालमेल जितना बेहतर होगा, परिणाम उतना ही अच्छा होगा।

यह ठीक टीवी के चैनल की तरह है। यह इसके बावजूद होता है, जबकि परीक्षा की कॉपी को जाँचते समय परीक्षक की भूमिका एक एम्पायर की तरह या कह लीजिए कि एक जज की तरह की होती है, जिससे पूरी तरह तटस्थता की उम्मीद की जाती है। ऐसा होना भी चाहिए। ऐसा होता भी है। लेकिन यदि हम इस "होने" की व्यावहारिकता पर विचार करें, तो पायेंगे कि एक जज यथासंभव तो तटस्थ होता है, लेकिन पूर्णतः नहीं। हाँ, वह "पूर्णतः तटस्थता" के लिए संघर्ष जरूर कर रहा होता है। बिल्कुल यही बात परीक्षक पर भी लागू होती है। और जिस या जिन बिन्दुओं पर पहुँचकर वह अपनी इस तटस्थता का विसर्जन करता है, उसे उसके द्वारा किया गया पक्षपात न मानकर एक नैसर्गिक स्थिति ही माना जाना चाहिए, क्योंकि अन्ततः वह भी है तो एक मनुष्य ही।

अगले अंक में हम इस परीक्षक के चरित्र को समझने की कोशीश करेंगे।

NOTE: This article by Dr. Vijay Agrawal was first published in 'Civil Services Chronicle'.